International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(5): 81-82

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(5): 81-82
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 20-07-2018
Accepted: 21-08-2018

सीमा गुप्ता
शोध – छात्रा, संस्कत – विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

Correspondence
सीमा गुप्ता
शोध – छात्रा, संस्कत – विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

भर्तृहरिनिर्वेद नाटक में यमक अलघङ्कार

सीमा गुप्ता

प्रस्तावना

महामहोपाध्याय हरिहरोपाध्याय द्वारा विरचित भर्तृहरिनिर्वेद नाटक संस्कृत–नाट्य साहित्य में एक नवीन प्रकार का नाटक है। यह नाटक शान्त रस प्रधान है। यह भर्तृहरिनिर्वेद नाटक विद्वानों के मध्य प्रशंसित रहा है। यह नाटक राजा भर्तृहरि के वैराग्य की कथा पर आधारित है। लोक प्रचलित कथा में राजा भर्तृहरि के वैराग्य का कारण उनकी पत्नी का दुराचरण था। परंतु हरिहरोपाध्याय ने भर्तृहरि के वैराग्य, गोरखनाथ के शिष्य होने का कारण रानी के चरित्र पर सन्देह न बताकर एक अपूर्व घटना की सृष्टि की है। रानी के प्रेम की परीक्षा लेने के लिए अपने मरने की झूठा समाचार फैलाते है। पति मरण की वार्ता सुनकर रानी अपने प्राण त्याग देती है तभी गोरखनाथ आते है तथा राजा भर्तृहरि का मोह दूर कर वैराग्य की शिक्षा प्रदान करते है। इस प्रकार राजा भर्तृहरि की वैराग्य कथा को बड़े ही मनोहर एवं सुन्दर रूप में इस नाटक में उपनिबद्ध किया गया है।

हरिहरोपाध्याय के पास अथाह शब्द सागर है। उनकी प्रतिभा कौशल से शब्द स्वयं ही उपस्थित होकर शब्द वैचित्रय का आधान करते है। भर्तृहरिनिर्वेद नाटक में शब्दालङ्कारों तथा अर्थालङ्कारों की रमणीय छटा सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। विशेषकर यमक अलङ्कार का प्रयोग सहृदय को चमत्कृत कर देता है। प्रस्तुत लेख में हरिहरोपाध्यायकृत भर्तृहरिनिर्वेद नाटक में यमक अलङ्कारों के प्रयोग के विषय में बताया गया है।

भरतमुनि भारतीय काव्यशास्त्र के प्रथम आचार्य हैं तथा इनके द्वारा रचित नाट्यशास्त्र ग्रन्थ काव्यशास्त्र का आद्य ग्रन्थ है। भरतमुनि ने अपने इस ग्रन्थ में चार अलङ्कार स्वीकार किए है जिसमें यमक का भी उल्लेख है –

''उपमा दीपकं चैव रूपकं यमकं तथा।
काव्यस्यैते ह्यलङ्काराश्चत्वारः परिकीर्तिताः।।''
ना.शा. 17/43.

यमक की परिभाषा उन्होंने इस प्रकार की है –
''शब्दाभ्यास्तु यमकं पदादिपु विकल्पितम्।।''
ना.शा. 17/60.

शब्दों की आवृत्ति 'यमक' कहलाती है जो कि पदों से प्रारंभ होकर अनेक विधाओं को धारण करती है। भामह के अनुसार –

''आदि मध्यान्तयमकं पादाभ्यासं तथावली।
समस्तपादयमकमित्येतत्पञ्चधोच्यते।।''
काव्यालङ्कार 2/9.

आचार्य मम्मट ने अर्थ होने पर अर्थात् पद यदि सार्थक हो तो भिन्न अर्थ वाले पदों की वैसी ही पुनः श्रुति होने पर यमक अलङ्कार होता है।

''अर्थे सत्यर्थभिन्नानां वर्णानां सा पुनः श्रुतिः।।''
का.प्र. 9/117.

साहित्यदर्पणकार के अनुसार अर्थ के होने पर, भिन्न अर्थ वाले स्वरों और व्यञजनों के समुदाय की उसी क्रम से आवृत्ति 'यमक' अलघझार कहलाता है –

''सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञजनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।''
साहित्यदर्पण 10/8.

जयदेव ने अपने ग्रन्थ चन्द्रालोक में यमक की परिभाषा इस प्रकार दी है –

''आवृत्तवर्णस्तवर्क स्तवकन्दाड.कुरं कवेः।
यमकं प्रथमाधुर्यमाधुर्यवचसो विदुः।।''
चन्द्रालोक ;5/8

सहृदय के हृदय में प्रशंसा रूपी मूल का अड्कुरण करने वाला अर्थात् आनन्द प्रदान करने वाला आवृत्त वर्णों का समूह यमक कहलाता है। सभी आचार्यों की परिभाषा का तात्पर्य यह है कि यमक में आवृत्त पदों की कई स्थितियाँ होती है। कहीं दोनों पद सार्थक होते हैं, कहीं दोनों निरर्थक, कहीं एक सार्थक होता है दूसरा निरर्थक। जहाँ दोनों पद सार्थक होते है वहाँ दोनों का अर्थ अलग–अलग होना चाहिए यही यमक का मूल आधार है। इसी कारण से यह अनुप्रास से पृथक है। यमक पाद एवं उसके एक देश में रहने के कारण अनेक रूप वाला होता है। इसके कई भेद होते है। भरताचार्य ने इसके दस भेद माने है –

''पादान्तयमकञ्चैव काञ्चीयमकमेव च।
समुद्गयमकञ्चैव विक्रान्तयमकन्तथा।।
यमकं चक्रवालदच संदष्टयमकं तथा।
पादादियमकञ्चैव तथाम्रेडितमेव च।
एतद्दशविधे ज्ञेयं यमकं नाटकाश्रयम्।।''
नाट्यशास्त्र–17/61–63

हरिहरोपाध्याय विरचित भर्तृहरिनिर्वेद नाटक में यमक अलड्.कार का सुन्दर प्रयोग दृष्ट्व्य है –

यस्मादासीत् तन्ममत्वं मम त्वं, मन्त्री राजा चाहमेतद् यतश्च।
श्रीगुर्वाज्ञा – लब्धसर्वाथसिद्धेः, स व्यामोहे मे समूलो विनष्टः।।
भ.नि.ना.–4/2

प्रस्तुत पद्य में राजा भर्तृहरि वैराग्य का प्रतिपादन करते हुए कहते है कि जिस अज्ञानता के कारण दूसरी वस्तुओं को अपना समझकर उस पर आसक्ति के कारण उनसे अपनापन होता है कि तुम मेरे मंत्री हो और मैं राजा हूँ। यह जो भ्रम है वह आज गुरु के उपदेश से प्राप्त सर्वार्थ सिद्धि नामक योग से समूल नष्ट हो गया है। इस पद्य में कवि ने भर्तृहरि द्वारा समस्त संसार को निस्सार बताया है। जो जो ममत्व भाव हमारे अंदर विद्यमान है वह हमारा अज्ञान है। यह मेरा पुत्र है, पत्नी है, मैं राजा हूँ यह हमारा अज्ञान है। इस अज्ञान का नाश ज्ञान प्राप्ति से ही संभव है।
प्रस्तुत पद्य में ममत्वं पद की आवृत्ति से यमक अलड्.कार है। प्रथम ममत्वं पद का अर्थ अपनापन (ममत्वभाव) तथा द्वितीय ममत्वं पद का अर्थ 'तुम मेरे हो' है।

संकल्पात् सकलापि संसृतिरभूदेषा विशेषान्ध्य–
भूरस्याश्चेद् विनिवृत्तिमिच्छसि तदैतन्मूलमुन्मूलय।
नावच्छिन्न्रमनेहसा न च दिशा यद् ब्रह्म सच्चिन्मयं
तत्त्वं तत्त्वमिदं विचिन्तय परानन्दं पदं प्राप्स्यति।।
भ.नि.ना.–3/16

इस पद्य में मूल तथा तत्त्वं पदों की आवृत्ति से यमक अलड्.कार है प्रथम मूल पद का अर्थ है जड़ तथा दूसरा मूल पद निरर्थक है। इसी प्रकार प्रथम तत्त्वं पद का अर्थ सत्चित् आनंदस्वरूप ब्रह्म का बोधक है तथा दूसरा तत्त्वं पद का अर्थ 'तत्त्वमसि' इस उपनिषद वाच्य का बोधक है।

अस्याः स्निग्धशिरीष–केसरशिखा–मृद्धड्.गमालिड्.गंतु
प्रोदूभमज्वलनाञ्चता वत चिता, काष्ठाचिता नोचिता।
मद्दोर्भ्यां पिहिता मदड्.कनिहिता, मत्कामवह्नावसा–
वह्नयाऽयवानहो! वरतनुः स्नेहोद्धते होष्यति।।
भ.नि.ना.–2/6

राजा भर्तृहरि अपनी पत्नी की मृत्यु के पश्चात् विलाप करते हुए कहते है कि इसके चिकने शिरीष फूल के केसर के अग्रभाग से कोमल अर्धें का आलिड्.गन करने के लिए यह धुआँ भरी आग एवं काष्ठ से भरी चिता उचित नहीं है, यह कोमलाड्.गी तो मेरे बाँहों से ढकी हुई मेरे ही अड्.गों पर रखी हुई, स्नेह से प्रज्वलित मेरे काम रूपी अग्नि में झट से अपने हाथ–पैर आदि को हवन कर देगी।
प्रस्तुत पद्य में चिता तथा वह्ना इन शब्दों की आवृत्ति से यमक अलड्.कार है। इस पद्य में प्रथम चिता शब्द का अर्थ चिता अर्थ में तथा दूसरे तथा तृतीय चिता शब्द निरर्थक है परन्तु अपने पूर्व वर्ण के साथ मिलकर क्रमशः लकड़ियों से व्याप्त तथा उचित नहीं है यह अर्थ है ।
यहाँ पर कवि ने राजा द्वारा विलाप कथन में यमक का सुन्दर प्रयोग किया है।

सारम्भा यदि बुद्धिरात्मदमने रम्भापि किं भावभू–
स्त्यक्तं चेन्मन एव कण्ठधनुषा कामेन का मेनका।
हेयत्वेन तनोर्वशीकृतहृदः किं न्यक्कृता नोर्वशी
चेन्मायैव जिता मनस्यभिमता किं भविनी भाविनी।।
भ.नि.ना.–5/6

प्रकृत उदाहरण में प्रथम रम्भा पद में रम्भा निरर्थक है तथा द्वितीय 'रम्भा' पद रम्भा नामक एक देवाड्.गना (अप्सरा) का नाम है। 'कामेन' पद का अर्थ 'कामदेव' तथा द्वितीय 'कामेन' पद निरर्थक है। 'तनोर्वशी' पद में उर्वशी पद निरर्थक है तथा दूसरा 'उर्वशी' पद अप्सरा का नाम है। इस प्रकार रम्भा – कामेन – उर्वशी पद की आवृत्ति होने से यमक अलड्.कार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भर्तृहरिनिर्वेद नाटकम् – उदयनाथ झा 'अशेाक', जय श्री प्रकाशन पुरी, 1927 शक संवत्त
2. नाट्यशास्त्र – भरत, (व्या0) ब्रजमोहन चतुर्वेदी, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1998
3. काव्यालड्.कार – भामह, (व्या0) रमण कुमारं शर्मा, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 1994
4. काव्य प्रकाश – मम्मट, (व्या0) आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्तशिरोमणि ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, पुनर्मुद्रण, जून, 2005
5. साहित्यदर्पण – विश्वनाथ, डॉ. सत्यव्रत सिंह, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1976
6. चन्द्रालोक – जयदेव, डॉ. त्रिलोकीनाथ द्विवेदी, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी, दिल्ली, 1992